समयसार चौथी गाथा `**समस्त जीवलोक को**' यहाँ - ऐसा लेना है जो अनादिकाल से भटक रहे हैं, उनके अतिरिक्त सम्यक्दृष्टि आदि की बात नहीं। समस्त जीवलोक में (कहां भी) भटकनेवाले मिथ्यादृष्टि को यहाँ लिया है। उन्हें राग की बात, राग करना और राग को भोगना... व्यवहार रत्नत्रय यह भी राग है। यह (बात) तो द्रव्यसंग्रह में है। राग करना और भोगना, यह बात तो प्रत्येक जीव ने अनंतबार सुनी है और उसका परिचय भी हो चुका है और अनुभव भी हो चुका है। संपूर्ण लोक को कहा, चाहे निगोद का जीव हो, परंतु उसे(राग का) अनुभव है, अर्थात उसमें सब आगया आहाहा !

`**कैसा है जीव लोक ? संसाररूपी चक्र के मध्य में पड़ा है**'। आहाहा ! मिथ्यात्व में स्थित है अर्थात वह कर्म चक्र के मध्य में स्थित है। - ऐसा स्थित..... द्रव्य निरंतररूप, जगत के जितने परमाणुओं का संयोग है - ऐसा हरएक जीव को अनंतबार संयोग हो चुका है। यह अपेक्षित बात है। कितने ही परमाणुओं का इस द्रव्य में संयोग नहीं हुआ, परंतु उसमें शक्ति है इसलिये अनंतबार हुआ - ऐसा कहा जाता है।

वैसे जीव समस्तक्षेत्र में जन्मा है - ऐसा भी नहीं है, परंतु उसमें मिथ्यात्वरूपी

शक्ति है जिसके कारण हर क्षेत्र में अवतरित हुआ - ऐसा भी कह सकते है। इसीप्रकार काल... इसीप्रकार `भव' स्वर्ग के भव अनंत किये - ऐसा कहा जाता है। ***कितने ही जीव अभी भी बाहर नहीं निकले परंतु उनकी श्रद्धा मिथ्या है, मिथ्यात्व के कारण चारों गतियों में भटकने का भाव उनके पास मौजूद है। अतः चार गति में अनंतबार भ्रमण किया, भव किये-*** ऐसा कहा जाता है। इसीप्रकार `भाव' ऐसे अनंत परावर्तन द्रव्य (परावर्तन) अनंत, क्षेत्र अनंत, काल अनंत, भव अनंत तथा भाव, अनंत, अनंत परावर्तन के कारण प्रत्येक (गति) अनंतबार बदलता-बदलता रहा। आहाहा ! जिससे परिभमण हुआ है। आहाहा ! भटकने की स्थिति ही जिसे प्राप्त हुई है। आहाहा ! चोरासी में अवतार लेने की स्थिति जिसे प्राप्त हुई है। यहाँ तक बात हो चुकी है।

`समस्त विश्व पर एकछत्र राज्य से वश करनेवाला बड़ा मोहरूपी भूत' मिथ्यात्व रूपी भूत। आहाहा ! मिथ्यात्वरूपी भूत समस्त विश्व को... समकिती के अतिरिक्त अज्ञानियों पर एकछत्र राज्य... जैसे चक्रवर्तीयों का राज्य होता है जहाँ भी देखो राज्य उसका होता है, ऐसे ही अनंत जीवों पर मिथ्यात्व का शासन है। साधु हुआ फिर भी राग से लाभ होता... यह मिथ्यात्वरूपी भूत उन्हें भी लगा है। आहाहा ! सूक्ष्मबात है भाई ! व्रती हो तो भी उन्हें मिथ्यात्वरूपी भूत इसप्रकार से है कि व्रतादिक के विकल्प मुझे लाभदायक है और वह व्यवहार व्रत मेरा कर्तव्य है - ऐसा मिथ्यात्वरूपी भूत (मिथ्या अभिप्राय) सभी जीवों में पूर्ण शासन एकछत्र-एकछत्र सभी में मिथ्यात्व ही छा रहा है। आहाहा !

जिसके राज्य में जो कानून हो वह कानून सारे राज्य में चलता है। कानून राज्य का नियम (शिक्का)... इसीप्रकार मिथ्यात्व का नियम... आहाहा ! अनंते अज्ञानी जीवों में छा गया है। आहाहा ! एकक्षत्र राज्य उसका है। जहाँ हो वहाँ मिथ्यात्व... मिथ्यात्व... मिथ्यात्व... (अर्थात) कुछ करना, कुछ करिये, कुछ व्यवहार करें तो निश्चय होगा - ऐसे मिथ्यात्वरूपी भूत ने एकछत्र राज्य करके इसे वश में कर लिया है। आहाहा ! कुछ करना तो चाहिए न भाई, कुछ किये बिना चलेगा ? क्या करना ? राग से भिन्न करना, यह करना है। परंतु राग करते-करते सम्यग्दर्शन होगा और यह व्यवहार है यही निश्चय को प्राप्त करायेगा... आहाहा !

- ऐसा एक मिथ्यात्वरूपी भूत पूरे विश्व को एकछत्र राज्य से वश में करनेवाला है। सभी को वश में कर लिया है। ओहोहो ! ऊंची पदवी धारी नग्न मुनि, दिगम्बर मुनि जिसे पंचमहाव्रत है अड्ढाईस मूलगुण है उन्हें भी मिथ्यात्व ने वश में कर लिया है। क्योंकि वह भी मानते हैं कि (व्यवहार) धर्म है, धर्म का कारण है वह सभी साधन है न ? व्रत, तप, भक्ति आदि साधन हैं, उससे मुझे निश्चय - साध्य प्रगट

होगा इसप्रकार के मिथ्यात्व के भाव ने उन्हें भी वश में कर लिया है। आहाहा ! - ऐसा सूक्ष्म है। अभी वह चिल्लाते है कि निश्चय व्यवहार का सुमेल उसे कहते हैं कि व्यवहार से निश्चय हो - यह अनेकान्त है। आहाहा ! राग तो पराश्रित (भाव) है और सम्यग्दर्शन है वह स्व आश्रित (भाव) है। भले ही महाव्रत का राग है। भक्ति का राग हो, परंतु उस परिणामों की दिसा पर तरफ है और सम्यग्दर्शन आदि, धर्मरूप परिणामों की दिशा स्वतरफ है। आहाहा !

कहते हैं कि बड़े पदवी धारियों को भी मिथ्यात्व ने हराया है। (एक) छत्र राज्य उसका अभी चलता है। आहाहा ! उसकी मुद्रा का प्रचलन है, मिथ्यात्वरूपी शिक्का का चलन (है) आहाहा ! साधु हुआ, मुनि हुआ, बाहर का वेश बदला, पंचमहाव्रत पाले उन्हें भी मिथ्यात्व ने घेर लिया है। आहाहा ! ऐसी बात है। बड़ा मिथ्यात्वरूपी भूत मिथ्यात्व... आहाहा ! सारे विश्व को एकछत्र राज्य से वश में करनेवाला। आहाहा ! यहाँ जैसे समस्त जीव लोक कहा था न ? कि अहित करनेवाला (उपदेश) उन्होंने सुना है, ऐसे ही लोक के सभी जीव परिभ्रमण करते है - ऐसा यह जीव लोक है। आहाहा !

`मोहरूपी बड़ा भूत कि जो बैल की तरह बोझा ढुलवाता है' आहाहा ! मिथ्यात्व का राज्य - ऐसा है कि बैल की तरह उसे यह राग करना पड़े, व्यवहार अपना कर्तव्य है, दया, दान, भक्ति, व्रत, तप यह कर्तव्य है - ऐसा मिथ्यात्वरूपी भूत है। आहाहा ! बैल की तरह बोझा ढुलवाता है, सभी भार है। आहाहा ! सूक्ष्म बात है भाई ! निर्विकल्प चीज है अंदर ज्ञायक वस्तु (ज्ञायकभाव) वह व्यवहार की अपेक्षा बिना प्रगट होता है, ऐसी यह वस्तु है। वह तो स्व की अपेक्षा-त्रिकाली की अपेक्षा से होता है, उसकी जगह ऊंची पदवीधारी, ग्यारह अंग का पाठी दश-दश हजार बीस-बीस हजारों में भाषण देनेवाला, ऐसे सभी को मिथ्यात्व ने घेर लिया है। आहाहा ! यह जो हम सभी परिषहसहन करते हैं, उपसर्ग सहन करते हैं तभी यह सहन करते-करते अंदर धर्म होगा। निश्चय सम्यग्दर्शन प्राप्त होगा - इसप्रकार मिथ्यात्वरूपी भूतने बैल की तरह बोझ ढुलाया है। आहाहा !

पाठ में तो **`गोरिव'** है न ? गोगो-इव; गो + इव पाठ में है, बैल की भांति। आहाहा ! इतने इतने काम करना पड़े अपने को, शास्त्रों की रचना करना पड़े, मंदिर बनाना पड़ें (श्रोता :- छपाना पड़े बेचना पड़े) छपाना पड़े। आहाहा ! प्रसिद्धि (होना) अध्यक्ष होना पड़े। इसके बिना हमारा कैसे चले ? चले अवश्य, संसार चले व्यवहार मार्ग चले किस प्रकार ? आहाहा ! उसने राग को मिथ्यात्व के कारण पकड़ रखा है, गजब की बात है बापू ! आहाहा ! मिथ्यात्वरूपी भूत ने इससे बैल की तरह बोझा ढुलवाया है। यह पंचमहाव्रत का परिणाम आदि भार क्लेश है। आहाहा ! और

इसने उसे मिथ्यात्व के कारण धर्म माना है, और कभी धर्म का कारण है, माना है ! आहाह !

अच्छा निमित्त हो तो आत्मा में कार्य हो, इसप्रकार उसे मिथ्यात्वरूपी भूत ने बैल की भांति दूसरे के कार्य में फँसा दिया है। आहाहाहा ! निमित्त चाहे कैसा हो, निमित्त से होता नहीं, तीनों काल में कुछ भी (होता) नहीं। निमित्त, निमित्त की पर्याय को करे। आहाहा ! ऐसी बातें बापू ! कठिन भाई, यह तो भगवान के विरह में विदेह क्षेत्र की बातें है। आहाहा ! वहाँ से लाये है न यह ? कुन्दकुन्दाचार्य वहाँ प्रभु के पास गये थे। जीवन्त तीर्थयात्रा की थी। आहाहा ! महाविदेह में आठ दिन रहे, थे तो ज्ञानी चारित्रवंत समकिति भी, परंतु वहाँ जाने से निर्मलता बहुत हुयी। यद्यपि हुयी तो अपने कारण... समझ में आया ? परंतु महाविदेह में गये थे वह भी अपनी योग्यता से गये थे न। आहाहा ! वहाँ से, जो स्वयं को अंतर (ज्ञान) प्राप्त हुआ, स्वयं से, वहाँ पर परंतु उसके कारण नहीं परंतु स्वयं से प्राप्त हुआ। आहाहा ! उससे यह बात कह रहे है। आहाहा !

कहते है कि बड़ा मोहरूपी भूत जिसके पास से बैल की तरह बोझा ढुलवाता है। जैसे बैल को बांध कर २५-२५ मन ५० मन ढुलवाता है। इसीप्रकार यह राग की मंदता को क्लेश, क्रिया महाव्रत और समिति गुप्ति की तथा ब्रह्मचर्यरूप क्रिया यह शुभ भाव है यह भार है क्लेश है परंतु अज्ञानी मिथ्यात्व के कारण यह करना चाहिए - ऐसा (मानकर) बोझा ढोता है। नय का विषय है एकांत है। सम्यक् एकांत (शुद्ध) नय का विषय है। उसकी जगह इसप्रकार अनेकान्त - ऐसा होता है कि व्यवहार से भी होता और निश्चय से (भी) होता। आहाहा ! - ऐसा मिथ्यात्व रूपी भूत... - ऐसा काम कर करके बैल की भांति मजदूरी कराता है यह। आहाहा ! है कि नहीं अंदर ? (उपयोग तो पूरे दिन आत्मा में रहता नहीं-फिर बाहर आता) यहाँ यह कहाँ प्रश्न है ? बाहर आता परंतु इससे लाभ नहीं। यह हमारे धर्म का कारण नहीं, ऐसी दृष्टि हो तो उसे मिथ्यात्व का भूत नहीं लगा बाहर आकर यह कर्तव्य करना चाहिए जिससे धर्म की पुष्टी हो, धर्म की वृद्धि हो, धर्म में सहायक हो - ऐसा तो कहा है न ग्यारहवीं गाथा में कि निमित्त की अपेक्षा हस्तावम्बन जानकर जिनागम में भी (व्यवहार का) कथन किया है, परंतु इसका फल संसार है। आहाहा ! ऐसी बात है। वाद-विवाद से वह बैठे - ऐसा नहीं बापू, पूरी दुनियाँ देखी है न। आहाहा !

यह मार्ग ही वीतराग का, आहाहा ! जिसे व्यवहार की भी अपेक्षा नहीं - ऐसा जो सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र, स्व के आश्रय से होता है, पर का आश्रय उसको होता नहीं। उसकी जगह मिथ्यात्वरूपी भूत कि यह व्यवहार करने से निश्चय की

प्राप्ति होगी तथा यह निश्चय तक पहुंचायेगा। आहाहा ! मिथ्यात्वरूप भूत बैल की भांति बोझा ढुलावाता है। भार है सभी बोझा है। आहाहा ! यह राग की विकल्प की क्रिया है वह करने लायक है और इससे लाभ होगा, यह बैल की तरह बोझा ढुलवाता है। आहाहा ! `**एयत्तस्सुवलंभो**' इसकी टीका है यह है न (गाथा) का तीसरा पद `एयत्तस्सुवलंभो' एकत्व की प्राप्ति इस प्रकार (सुलभ) नहीं। इसकारण इसे एकत्व की प्राप्ति नहीं। आहाहा ! यह द्वेत की प्राप्ति है। आहाहा ! आहाहा !

बैल की तरह बोझा ढुलवाता है। आहाहा ! पच्चीस-पच्चीस उपवास, पचास-पचास उपवास, चारप्रकार के आहार का त्याग पानी बिना, उससे निर्जरा होती है, बिना पानी के उपवास करो तो निर्जरा ज्यादा होती है। आहाहा इस प्रकार उसने मिथ्यात्वरूपी भूत के कारण यह राग की क्रिया के बैल की तरह करता है। आहाहा ! ऐसी बातें सुनना मुश्किल पड़े। आहाहा ! यही तो कहा इसके लिये तो बात चलती है।

फिर जब इस मिथ्यात्वरूपी भूत ने, इसे राग में जोड़ दिया है राग से कुछ लाभ होगा... परन्तु राग ये क्रिया-काण्ड क्लेश है। चाहे तो पंचमहाव्रत हो, बारह व्रत हों, परंतु राग है, क्लेश है, क्लेश का बोझा करना पड़े, इसप्रकार मिथ्यात्वरूपी बैल की भांति जोत दिया है। आहाहा ! काम कठिन लगे।

`**तीव्रता से हुयी तृष्णा**' और यह जो मिथ्यात्व का जोर हुआ उसमें से तृष्णा फट फट निकली। उसका रोग... कुछ करना कुछ करना कुछ करना राग करना कुछ करना, पर का कुछ भला करना तो अपने को कुछ लाभ होगा - ऐसा तृष्णारूपी राग जिसे तीव्रता से हुआ है। आहाहा ! यह नग्न दिगम्बर साधु बने, परंतु अंदर में मिथ्यात्व है इसकारण राग से लाभ मानकर बैल की भांति जुड़ गया है। उसे तृष्णारूपी रोग, अंदर उत्पन्न हुआ है। यह करूं यह करूं यह करूं चाहरूपी दाह है न ? तृष्णारूपी रोग, उसकी अंदर में जलन है। आहाहा ! यह शुभ राग भी जलन है `यह राग आग दहै सदा, तातै समामृत सेहये' आहाहा ! चाहे तो यह शुभ राग हो परंतु कहते हैं कि तृष्णरूपी रोग ने जलन उत्पन्न की है। आहाहा !

जिसके दाह से अंतरंग में पीड़ा प्रगट हुयी है। आहाहा ! यह शुभराग भी दाह (जलन) और पीड़ा (दर्द) है, परंतु मिथ्यात्व का भूत उसके तृष्णा और लोभ के कारण... आहाहा ! यह मुझे ठीक है, यह मुझे ठीक है, हमने ठीक किया इस दाह से जल रहे हैं। आहाहा ! सूक्ष्म बातें बापू ! वीतराग मार्ग की। वीतराग सर्वज्ञ परमेश्वर यह सुन्दर सर्वज्ञ स्वभावी प्रभु (निजात्मा) (ज्ञानी) उसमें समाना चाहता है। आहाहा ! सर्वज्ञ हुये प्रभु... सर्वज्ञ स्वभावी में जाओ उसमें ठहरो, प्रतीति के द्वारा जाना एवं स्वरूप से ठहरना। आहाहाहा !

- ऐसा करवाना चाहते है, उसे नहीं समझने से... तृष्णारूपी रोग जिसे लगा है, यह करूं, यह करूं, यह करूं, यह करूं... आहाहा ! पण्डिताई करूँ तथा विद्वता करूँ, तथा मैं बहुत पढ़ु और जगत के बहुत (जीवों) को समझाऊं तो मुझे लाभ होगा। दुनिया को कुछ लाभ होगा तो उसका कुछ लाभ उसे नहीं मिले ? उसका कुछ हिस्सा आये कि नहीं थोड़ा ? आहाहा ! परंतु वहाँ तृष्णारूपी अग्नि ने उसे यहाँ जला डाला है और अपने को तथा दूसरे को लाभ होगा। दूसरे लाखों व्यक्ति समझें तो थोड़ा १० और १२ आना सोलहमां भाग कुछ आये कि नहीं ? आहाहा ! धूल में मिले नहीं एक भी हिस्सा। यहाँ तो, अरे बापू ! यह मार्ग अलग है भाई !

यहाँ तो अंदर स्वरूप में, आहाहा ! अंदर स्वभाव में जाना है, वहाँ बाहर के कारणों की सहायता से कैसे जा सके भाई ? आहाहा ! बाहर के कारणों का तो आश्रय छोड़ दे उसका लक्ष्य छोड़दे उनकी रुचि छोड़दे, तब अंदर में जाये तब उसे अंदर के आश्रय से लाभ होगा... परंतु यह बाहर के क्रिया-काण्ड खूब करे, उपवास करे, आजीवन ब्रह्मचर्य पाले, छह काय की हिंसा न करे, कंदमूल न खाये, आजीवन (रात्रि में) चार प्रकार के आहार का त्याग करे, भोजन न करे, बापू ! यह तो सभी राग की क्रिया है भाई ! आहाहा ! परंतु तृष्णारूपी दाहने उसे जला डाला है ? तृष्णारूपी रोग की जलन से अंतर में पीड़ा उत्पन्न हुयी है। भले दूसरों को उपदेश देकर लाभ पहुँचाने का शुभभाव हो, परन्तु यह भी दाह है, अग्नि है। आहाहा !

यहाँ कहा है कि रोग के दाह से जिसे अन्तरंग में पीड़ा प्रगट हुई है... भले शरीर निरोगी हो... पञ्च महाव्रत पालता हो... परन्तु उसे अन्तरंग में पीड़ा उत्पन्न हुई है। यह शुभराग करते करते निश्चय सम्यग्दर्शन होगा। (- ऐसा माननेवाले) अंतरंग में दुःखी है, वे अंतरंग में दुःख को भोगते हैं। आहाहा ! यह बात लोगों को कठिन लगती है परंतु यहां तो स्पष्ट बात है सत्य का उद्घाटन है। सत्य यही है इसके अलावा सभी असत्य है। अरे ! प्रभु का मार्ग तो वीतरागता से प्रारंभ होता है, कि राग से प्रारंभ होता है ? (राग) यह वीतरागमार्ग ही नहीं। आहाहा ! आजकल तो राग से शुरूआत कराके वीतराग में ले जाना चाहते है। आहाहा !

तृष्णारूपी रोग... उसकी जलन... देखा ? यह शुभराग की तृष्णा है वह भी जलन है, अग्नि है, कषाय है। आहाहाहा ! अरे लोग जिसे धर्म मान कर बैठे है, यहाँ कहते है वह तो तृष्णारूपी राग की जलन है पीड़ा है। आहाहा ! तथा यह बात अब कहाँ गुप्त रखी है। बाहर में बहुत प्रसिद्धि हो गई है। यहाँ से बीसलाख पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं सभी में यह बात है। हैं। आहाहा ! भाई ! तुम अपने घरमें से निकल कर बाहर में शुभाशुभ भाव में भटकते हो, यह जलन है प्रभु !

आहाहा ! यह मार्ग लोगों को कठिन लगता है। इसलिये - ऐसा ही कहते हैं, एकांत है एकांती है, कहो प्रभु ! आहाहा !

(- ऐसा लगता है कि व्यवहार का लोप होगया) व्यवहार का लोप... उसकी रुचि छोड़े बिना स्वभाव की रुचि हो सकती नहीं। बहुतों को - ऐसा लगे कि छोटे-छोटे बालक भी ऐसे भगवान के दर्शन करे- ऐसा करे, वैसा करे, उसके लिये तुम कहो उससे लाभ नहीं, तब नहीं करे क्या ? भाई ! करे न करे इसका प्रश्न कहाँ है। आहाहा ! सभी करते हैं, यह करते समय राग होता है। आहाहा ! परंतु जाये न जाये इसके साथ संबंध क्या है ? शुभ भाव है वह स्वयं जलन है। उसे करते-करते (क्या) सम्यग्दर्शन (और) शांति मिलेगी। आहाहा ! रोग से निरोगता होगी ? जलन से शांति मिलेगी ? आहाहा ! बहुत संक्षेप में टीका (की है) ऐसी टीका तो... आहाहा ! भरतक्षेत्र में समयसार की यह टीका... दिगम्बरों में दूसरे शास्त्रों की ऐसी टीका, ऐसी यह कोई अद्भुत टीका है। आहाहा ! जिसके थोड़े शब्दों में अगाध गंभीर भाव भरे हैं। आहाहा !

प्रभु तुम्हारी प्रभुता प्राप्त करने के लिये पामर स्वरूप रागकी आवश्यकता नहीं नाथ ! आहाहा ! प्रभु तुम्हें यह कलंक है। आहाहा ! ***(राग) हो यह अलग बात है, होता है तो ज्ञान उसे भिन्नरूप जानता है, भले ही इसप्रकार जाने कि हमारी पर्याय में होता है, परंतु राग है दुःखरूप, चाहे परिणमन की अपेक्षा मैं इसका कर्त्ता हूँ, तथापि है तो राग एक जलन।*** आहाहा ! कितना समाया है देखो न ! ओहोहोहो !

अभी मिथ्यात्व का एकछत्र राज्य चलता है, जहाँ पूँछो वहाँ सभी जगह मिथ्यात्व का जोर है, आहाहाहा ! बालक से लगाकर बड़े त्यागी महात्मा लाखों करोड़ों वर्षों तक पंचममहाव्रत पालते हों उसके पास भी मिथ्यात्व का राज्य पड़ा है। (बादशाही शासन। बादशाही शासन। आहाहा ! ऐसी बात कहाँ है भाई ? आहा ! यहाँ तो तुमने जो अनंत जन्म-मरण के अनंत फेरे किये, वह इस मिथ्यात्वभाव से किये। आहाहा ! अब उसे छोड़ने के लिये यह कहते हैं। अपना मान कर रखा है और जन्म-मरण किये है। अब उसे छुड़ाते है। बापू ! अब परिभ्रमण से छूट नाथ। आहाहा ! पशु को भी बंधन से मुक्त करो तो प्रसन्न होता है, छोड़ो तो प्रसन्न होता, वैसे तो बंधता है शाम को, सुबह छोड़े तब खुश होता है। आहाहा ! यहाँ तो कहते हैं कि राग के भूत की तुम्हें पीड़ा है प्रभु, तुम्हें इससे सम्यग्दर्शन होगा ? स्व का आश्रय मिलेगा, पर का आश्रय करने से स्व का आश्रय मिलेगा ? यह राग को जलन से अंदर में (दर्द) पीड़ा है प्रभु ! आहाहा !

यह जलन बिना की चीज प्रभु अंदर है, वहाँ तुम्हारी नजर जाती नहीं और

यहाँ की नजर से हटता नहीं। आहाहा ! वहाँ निधान पड़ा है अंदर, अकेला शांत रस का कंद है, जिसमें दया, दान के विकल्प की उत्पत्ती का भी स्थान नहीं। आहाहा ! - ऐसा ध्रुव धाम, ध्रुव का विश्राम स्थान स्थित है न नाथ ! आहाहा ! वहाँ जाने के लिये यह बातें करते हैं यह बात तिरस्कार करने के लिये नहीं। आहाहा ! भाई तुम इसप्रकार अनंतकाल से दुःखी हो, क्योंकि तुम्हें मिथ्यात्वरूपी भूत लगा है जिससे तुझ में चाहरूपी ज्वाला फूटी है, तथा यह करूं, यह करूं, यह करूं (कर्त्ता भाव) में तुम्हें लगा देता है। आहाहाहा !

कनुभाई ! - ऐसा है यह ! जजकी पढ़ाई में - ऐसा आया है कहीं ? यह तो वीतराग का न्यायधीशपना है। सर्वज्ञ परमात्मा जिनेश्वरदेव, वीतरागस्वरूप प्रभु ! उनकी आज्ञा विरूद्ध राग से लाभ माने वह जैन नहीं आहा ! तुम जैन के दास नहीं तुम राग के दास हो। आहाहा ! (श्रोता :- अंतर में जाने के लिए सूक्ष्म विकल्प रोक लेते है जाने नहीं देते) यहाँ तो विकल्प की भी जरूरत नहीं, वहाँ विकल्प काम करता नहीं, विकल्प तो आकुलता है। मिथ्यात्व ने उसे विकल्प में रोक रखा है। वहाँ से हटता नहीं आहाहा !

जिसे अंतरंग में पीड़ा उत्पन्न हुयी है। आहाहा ! यह तो - ऐसा मानता है कि हम सुखी हैं और हमको आनंद है। वह तो अभी अशुभ भाव व्यापार, धंधा, भोग विषय, खानापीने की अनुकूलता में, प्रसन्नता महसूस करता है, वह तो तीव्र पाप के परिणाम (रूपी) ज्वाला में जल गया है न ! शरीर जले (तो क्या) उसे ठीक समझते हैं ? आहाहा ! ऐसे भगवान आत्मा का शांति संतोष वीतराग स्वभाव, अशुभ राग के प्रेम में जल जाता है, तुम्हारे अंग जलते है प्रभु, पर्याय (की वात है) द्रव्य तो जैसा है वैसा है। आहाहा !

यह सम्यग्दर्शन के आठ अंग कहे है न ? निशंक आदि यह कहीं भेदरूप नहीं। यह आठों मिलकर एकरूप समकित है। भेद है वह वहाँ लाभ करता नहीं वह - ऐसा (लाभदायक) नहीं - ऐसा कहते हैं। आहाहा ! निःशंक निःकांक्ष आदि जो आठ अंग कहे समकिति के अर्थात सम्यग्दर्शन का एक अंग हुआ यह ? यह सभी भाग मिलाकर अकेला समकित है, अकेली वस्तु है यह, अंग अलग-२ है - ऐसा नहीं। आहाहा ! उसके आठ भेद भी जिसमें नहीं, यह अखण्ड वस्तु जो है सम्यग्दर्शन वह शांति का कारण और स्वाश्रय का कारण है। आहाहा ! बाहर की चीजों के भपके में (चमक में) और दिखाने में जितना जाओगे उतनी पीड़ा है। यह तो ठीक है... परन्तु शुभभाव में जाते हो तो इसमें भी पीड़ा है। भाई राग है वह दुःख है, यह अंतरंग रोग की पीड़ा है। आहाहा ! शरीर में रोग हो न हो

उससे कुछ सम्बन्ध नहीं। परंतु अंतरंग में यह बड़ा रोग है। आहाहा ! इस रोग को नाश करने का उपाय स्व का आश्रय लेना। ऐसी बात है।

कलशटीका में कहा है न बारह अंग का (सार)। बारह अंगों में अनुभूति (करने का) कहा है। आहाहाहा ! चाहे जितनी बातें कहीं है, बारह अंग में चरणानुयोग और करणानुयोग तथा प्रथमानुयोग में। बात तो यही है कि स्व के आश्रय में जाओ पर का आश्रय छोड़ दो। आहाहा ! छोड़ दो यह भी नास्ति से है स्व के आश्रय में जाओ वहाँ पर का आश्रय छूट जाता है। आहाहा ! परन्तु इसमें समझना क्या ? आहाहा ! ऐसी सूक्ष्म-सूक्ष्म बातें, अभी तो यहाँ पूरे दिन संसार के काम में लगा हो। उसे दूसरा रास्ता सरल है कि नहीं ? आहाहा ! आहाहा ! बापू, सरल तुम्हीं हो तथा शुभाशुभ भाव यह तो भार बोझा क्लेश है, पीड़ा है। आहाहाहा ! आहाहा !

`प्यास से आकुलित होकर मृगतृष्णा जैसा' आहाहा ! मिथ्यात्व के जोर से फूट कर निकली तृष्णा, उसमें से निकली चाह, जिससे अंतरंग पीड़ी हुयी है। आहाहा ! आग बन बन के मृगतृष्णा जैसा विषय अर्थात अतीन्द्रिय विषय अपना है उसे छोड़कर। आहाहाहा आचार्य (भगवान) की क्या शैली ! उन्हें सुनना या वीतराग (देव) की वाणी सुनना, आहाहा ! यह मृगतृष्णा जैसा विषय का गांव है समूह है, आहाहा ! छह घड़ी भगवान की वाणी इसप्रकार निकलती है सुबह में, वहाँ तो बंद हो जाती है छह घड़ी में। आहाहा ! सुनने की तृष्णा (प्यास) जो है वह तो ज्यों के त्यों खड़ी रही। आहाहा ! कठिन काम है। आक बन बन के मृगतृष्णा जैसा विषय... (अर्थात) यह निमित्त का संयोग तो मृगतृष्णा जैसा है। आहाहा ! यह पंचेन्द्रिय को विषय सुनना, देखना, रस चखना, गंध स्पर्श... आहाहा ! आहाहाहाहा !

देखो न कल बात नहीं हुयी थी, शादी के समय लड़के का हार्टफैल, हृदय बैठ गया। आहाहा ! शादी पती-पत्नी दोनों बैठे ब्राह्मण मंत्र जपते थे जपते जपते तो वह उड़ गया (मर गया) हृदय बैठ गया, वरराजा का हृदय बैठ गया। - ऐसा लिखा है। `शादी के मण्डप में वरराजा का हृदय बैठ गया' आहाहा ! - ऐसा लिखा है अंदर हों बड़े अक्षरों में। आहाहा ! कितना उत्साह होगा ? आहाहा ! भोग की तृष्णा, स्त्री मिलने की भावना, लोभ और बहुत सामग्री में अब अपन लाभ लेंगे। आहाहा !

यह मृगतृष्णा जैसा विषयग्राम... यह तो स्थूल विषय कहा है। परंतु पांचों इन्द्रियों का जो विषय है... भगवान को सुनना देखना यह सब विषय है। (भगवान स्वयं इन्द्रिय के विषय है) इन्द्रिय है न इन्द्रिय। वह विषय है, वह इन्द्रियों का विषय है। आहाहा ! मृगजल जैसा, आहाहा यह मंदिर यह करोडो रूपयों का मंदिर ऐसे जलहल-जलहल ज्योति हो उसमें बिजली लगे, क्षणभंगुर, नाश होजाये, `परमात्म प्रकाश' में कहा है

यह सभी तीर्थस्थल, मंदिर, सभी कालरूपी अग्नि का ईंधन हैं, कालरूपी अग्नि की लकड़ी हैं यह। आहाहा ! बापू यह चीज कैसे रहेगी तथा कहाँ रहेगी देखो ! आहाहा !

एक क्षण में जल गया न ? घाटकोपरमें सवालाख का मण्डप, व्याख्यान चलता था, पांच-पांच छह-छह हजार व्यक्ति, देखो ठीक समय पर आया आधा घण्टा देरी हुयी (व्याख्यान) तीन बजे शुरू करना था २$^{१}/_{२}$ बजे आग लगी। पूरा मण्डप समाप्त घाटकोपर का। धू धू धू धू अग्नि लगी। आहाहा ! तीन दिन बंद रखना पड़ा तीन दिन बाद दूसरे जगह सर्वोदय में। आहाहा ! नाशवान चीज में स्थायीपना देखेगा तो किस प्रकार स्थाई रहेगा ? कब वह पलट कर राख होगा... आहाहा ! शरीर पलट कर कब यह राख होगी, मुरदा कब बनेगा ? आहाहा ! (मृतक कलेवर) मृतक कलेवर में अमृत सागर मुर्छाया। आहाहा ! ऐसी बाहर की तृष्णा के मृगजल जैसी। आहाहा ! विषय ग्राम, ग्राम समझे न ? ग्राम अर्थात विषयों का समूह पांचों (इन्द्रियों) का समूह रूप, रस, गंध, स्पर्श (शब्द)।

दूसरा एक बार - ऐसा सुना था कि दुल्हा-दुल्हन शादी करने बैठे थे, वहाँ नीचे से सर्प आया, काटा तो वर मर गया वही के वही। यह तो नाशवान वस्तु है। बापू यह तो ठीक परंतु यहाँ तो शुभ भाव को नाशवान गिनकर... आहाहा ! है ? विषय समूह ने घेरा डाला है। क्या कहते हैं यह, क्षणभर में शब्द और क्षण भर में रूप तथा क्षण भर में रंग तथा क्षण में स्पर्श ने घेरा डाला है इसमें। आहाहा ! अंतरंग स्वरूप का देखना छोड़कर पांचों इन्द्रियों के विषय में घेरा डाला है। एक के बाद एक, एक के बाद एक लगातार घेरा डाला है। आहाहा !

क्या समझाते हैं प्रभु, आहाहा ! अल्प भाषा में कितना भरा है। आहाहा ! मृगजल जैसा विषय ग्राम अर्थात समूह है न अंदर ? इन्द्रिय विषयों का समूह। शास्त्रों को पढ़ना, उसे भी विषय कहते हैं। आहाहा ! इस विषय में घेरा डालता है। प्रभु मिथ्यात्व के प्रभाव से तृष्णा फूटी है इसलिये विषयग्राम में, बाहर के विषयग्राम में घेरा डालता है। आहाहा ! एक के बाद एक के बाद एक ग्रहण करता है, जैसे रुई की पोनी पूरी हो तब दूसरी, दूसरी पूरी हो तब तीसरी इसप्रकार एक लक्ष्यमें से छूटे तब दूसरे तथा तीसरा। आहाहा ! पांचों इन्द्रियों के विषय में घेरा डाला है इसने, भगवान के पास जाता नहीं। जहाँ प्रभु ज्ञायक देव विराजते हैं। आहाहा !

और आपस में आचार्यत्व भी करते हैं। आहाहा ! देखा ? एक दूसरे को समझाते है एवं सामनेवाला भी स्वीकार करता है। आहाहा ! शुभ भाव करना चाहिए भगवान की भक्ति करना चाहिए, भगवान का स्मरण करना चाहिए पंचेन्द्रिय के विषयों को छोड़ना चाहिए तभी आत्मा को लाभ होगा... तब सामनेवाला स्वीकृत करे ! इस प्रकार

परस्पर मिथ्यात्व का आचार्यपना करते हैं। जो पांचों इन्द्रियों के माध्यम से शुभ भाव होता है वही ठीक है। क्या एकदम आत्मा में जा सकते है क्या ? आत्मा का निर्विकल्प अनुभव ऐसे ही होता होगा क्या ? पहले बाहर (पाप) से छोड़ें व्यवहार (पुण्य) में आये तब फिर विश्राम मिले तो अंदर ठहर सके।

रजनीश है न रजनीश वह इस प्रकार कहता है न ! पहले खूब हँसों, खूब हँसों, हँसों फिर निर्विकल्प हो जाओगे। आहाहा ! जगत को बरबाद कर दिया (लूट लिया, ठग लिया) रजनीश है न रजनीश (शिखाता है) पहले खूब रोओ, खूब रोओ एक बार खूब रोओ, रोकर फिर रोना बंद कर दो तौ निर्विकल्प हो जावोगे। अति अन्याय कर रहा है और उसे सुननेवाले सौ सौ रूपया देकर सुनते हैं। ऐसे भी व्यक्ति है अभी, आहाहा ! जैनों का पहले प्रोफेसर था, तारणपंथ में फोटो में आया था कि एक व्यक्ति को कुछ इस प्रकार दबाता, जिससे कुछ होजाता, आहाहा ! मुंह फट गया था उसका - ऐसा अखबार में आया है। - ऐसा कहताथा कि इसे फिर अंदर में निर्विकल्पता हो जाती। आहाहा ! (श्रोता :- मानसिक स्थिरता हो जाती अर्थात निर्विकल्पता मानते) अरे ! इससे हो ? यह तो दुःखरूप है। खूब रो... लो फिर विकल्प टूट जायेगा बाद में निर्विकल्प हो जायेगा। आहाहा ! यह तो ज्यादा विकल्प करो... जिस जाति का विकल्प आये उसे तोड़ डालो, लगा दिया काम में। आहाहा ! भोगानंद में भी ब्रह्मानंद है, भोग में भी सुख मिलता है न ? यह आनंद आत्मा का है, अरे ! प्रभु तुम क्या करते हो यह ? अरे ! उसे सुननेवाले मिलते और माननेवाले मिलते हैं। आहाहा !

यहाँ तो संप्रदाय में रहकर भी परस्पर आचार्यत्व भी करते हैं। अर्थात दूसरों को कह कर, उसप्रकार अंगीकार कराते हैं करो इस प्रकार मंदिर बनवाओ, लाईट करो, तुम्हारा इससे कल्याण होगा। अरे प्रभु ! आहाहा ! यह तो एक दूसरे का मिथ्यात्व का पोषण करते हैं। आहाहा ! आपस में एक दूसरे को एक प्रेरणा दे, दूसरा स्वीकृत करे। वह हां कहे, वह कहे बराबर यह बात तुमको बेठी बहुत अच्छी बात है, प्रमाण वचन कहते हैं। आहाहा ! परस्पर आचार्यपना भी करते हैं आचार्यपना अर्थात महानता बतलाते हैं। इस प्रकार हम ठीक कहते हैं। हम ठीक कहते हैं शास्त्रों में - ऐसा आता है। आहाहा ! (समयसार में) आया है न ? विद्वतजन भूतार्थतज व्यवहार में वर्तन करे। तब उस समय बड़े-बड़े पण्डित निश्चय छोड़कर व्यवहार में प्रर्वतन करते थे। कुन्दकुन्दाचार्य के समय में। आहाहा !

विद्वत्जन भूतार्थ तज, अरे ! विद्वानों तुमने पढ़-पढ़ कर क्या पढ़ा ? अंदर जो वस्तु है वहाँ जाना चाहिए, उसका आश्रय छोड़ कर व्यवहार में वर्तन करे परंतु

यह तो संसार में परिभ्रमण करना है। आहाहाहा ! पढ़े-लिखे भी व्यवहाररूप प्रवृत्ति कर ते है। आहाहा ! परस्पर आचार्यपना भी करते हैं, एक दूसरे को अंगीकार कराते है।

इसप्रकार काम भोग की कथा तो सबको सुलभ है। आहाहा ! है न पहले पद में '**सुदपरिचिदाणुभूदा सव्वस्स वि कामभोगबंधकहा**' इसका अर्थ किया। आहाहा !

इसप्रकार जगत को ऐसी बात तो सुलभ है बापू ! जहाँ हो वहाँ साधु नाम धरावे, आचार्य नाम-धरावे, त्यागी नाम धरावे, ब्रह्मचारी नाम धरावे, सभी जगह उपदेश - ऐसा चलता है तथा सामनेवाले हाँ कहकर स्वीकृति देते हैं कि बराबर है यह। वह बात करते हैं कि अंदर में जाओ अंदर में क्या है और कहा जाना, इसकी अपेक्षा यह करने का ख्याल आता है न। परमार्थवचनिका में आता है आगम का व्यवहार समझ में आता है। अध्यात्म के व्यवहार की खबर पड़ती नहीं, अध्यात्म का व्यवहार यह कि अंदर आत्मा का आश्रय लेकर सम्यग्दर्शनज्ञान प्रगट करना यह, (अध्यात्म) का व्यवहार है इसलिये राग का करना और राग का भोगना यह कहानी अर्थात भाव तो सबको सुलभ है यह सुलभ हो चुका है। आहाहा !

परंतु फिर दूसरी बात करेंगे ! (प्रमाण वचन गुरुदेव !)